CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

हिन्दी साहित्य

प्रश्नोत्तर रूप में

आईएएस मुख्य परीक्षा अध्यायवार हल प्रश्न-पत्र 2009-2023

1999–2008 अध्यायवार हल प्रश्न–पत्र
chronicleindia.in पर निःशुल्क उपलब्ध

हिन्दी साहित्य

प्रश्नोत्तर रूप में

आईएएस मुख्य परीक्षा अध्यायवार हल प्रश्न-पत्र 2009-2023

वर्ष 2009 से पूर्व के हल प्रश्न-पत्रों के अध्ययन हेतु आप chronicleindia.in पर विजिट कर सकते हैं; ये प्रश्न-पत्र पाठकों के लिए निःशुल्क उपलब्ध हैं।

यह पुस्तक संघ लोक सेवा आयोग की सिविल सेवा मुख्य परीक्षा के वैकल्पिक विषय के साथ-साथ राज्य लोक सेवा आयोगों की मुख्य परीक्षाओं तथा अन्य समकक्ष प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु भी समान रूप से उपयोगी है।

- पुस्तक में प्रश्नों के उत्तर को मॉडल हल के रूप में प्रस्तुत किया गया है। प्रश्नों को हल करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि उत्तर सारगर्भित हों तथा पूछे गए प्रश्नों के अनुरूप हों।
- इस पुस्तक में प्रश्नों से संबंधित अन्य विशिष्ट जानकारियों को भी उत्तर में समाहित किया गया है, ताकि अभ्यर्थी इसका उपयोग न सिर्फ हल प्रश्न-पत्र के रूप में, बल्कि अध्ययन सामग्री के रूप में भी कर सकें।
- इस पुस्तक का उपयोग अभ्यर्थी अपनी उत्तर लेखन शैली में सुधार लाने तथा प्रश्नों की प्रवृत्ति व प्रकृति को समझने के लिए भी कर सकते हैं।

संपादकः एन. एन. ओझा

हलः क्रॉनिकल संपादकीय समूह

CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

अनुक्रमणिका

अध्यायवार हल प्रश्न-पत्र 2009-2023

प्रथम प्रश्न-पत्र

खंड-क : हिन्दी भाषा और नागरी लिपि का इतिहास

1. अपभ्रंश, अवहट्ट और प्रारंभिक हिन्दी का व्याकरणिक तथा अनुप्रयुक्त स्वरूप..... 1
2. मध्यकाल में ब्रज और अवधी का साहित्यिक भाषा के रूप में विकास..... 10
3. सिद्ध-नाथ साहित्य, खुसरो, संत साहित्य, रहीम आदि कवियों और दक्खिनी हिन्दी में खड़ी बोली का प्रार्भिक स्वरूप.. 22
4. उन्नीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली और नागरी लिपि का विकास..... 37
5. हिन्दी भाषा और नागरी लिपि का मानकीकरण..... 43
6. स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी का विकास..... 48
7. भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी का विकास.. 52
8. हिन्दी भाषा का वैज्ञानिक और तकनीकी विकास..... 62
9. हिन्दी की प्रमुख बोलियां और उनका परस्पर संबंध.... 72
10. नागरी लिपि की प्रमुख विशेषताएं और उसके सुधार के प्रयास तथा मानक हिन्दी का स्वरूप..... 82
11. मानक हिन्दी की व्याकरणिक संरचना..... 89

खंड-ख : हिन्दी साहित्य का इतिहास

12. हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की परंपरा..... 100
13. हिन्दी साहित्य के प्रमुख काल..... 103
    - आदि काल..... 103
    - भक्ति काल..... 108
    - रीति काल..... 122
    - आधुनिक काल..... 129
14. कथा साहित्य..... 144
15. नाटक और रंगमंच..... 161
16. आलोचना..... 178
17. हिन्दी गद्य की अन्य विधाएं..... 186

द्वितीय प्रश्न-पत्र

खंड-क : पद्य साहित्य

1. कबीर..... 198
2. सूरदास..... 207
3. तुलसीदास..... 217
4. जायसी..... 226
5. बिहारी..... 234
6. मैथिलीशरण गुप्त..... 242
7. जयशंकर प्रसाद..... 249
8. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'..... 256
9. रामधारी सिंह 'दिनकर'..... 264

10. अज्ञेय 271
11. मुक्तिबोध 276
12. नागार्जुन 286

खंड-ख : गद्य साहित्य

13. भारतेन्दु 291
14. मोहन राकेश 302
15. रामचंद्र शुक्ल 310
16. निबंध निलय 321
17. प्रेमचंद 327
18. जयशंकर प्रसाद 339
19. यशपाल 345
20. फणीश्वरनाथ रेणु 352
21. मन्नू भंडारी 361
22. एक दुनिया समानान्तर 366

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
हिन्दी साहित्य
(प्रथम प्रश्न-पत्र)

खण्ड 'क' (हिन्दी भाषा और नागरी लिपि का इतिहास)

अपभ्रंश, अवहट्ट और प्रारंभिक हिन्दी का व्याकरणिक तथा अनुप्रयुक्त स्वरूप

प्र. आरंभिक हिन्दी की प्रमुख विशेषताएं।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2023)

उत्तर: अपभ्रंश तथा अवहट्ट के बाद तथा खड़ी बोली के साथ हिन्दी के मानक स्वरूप से पहले की अवस्था आरंभिक हिन्दी कहलाती है, जिसका काल लगभग तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी का है, जब पहली बार हिन्दी तथा उसकी बोलियां स्वतंत्र रूप से प्रकट होने लगी थीं।

आरंभिक हिन्दी की प्रमुख विशेषताएं

- स, श और ष के स्थान पर हर जगह 'स' का प्रयोग किया जाता था।
- ण व्यंजन का अधिक इस्तेमाल किया गया।
- क्षतिपूरक दीर्घीकरण आरंभिक हिन्दी की प्रमुख विशेषता थी, जहां अवहट्ट में संयुक्त व्यंजनों का विकास हुआ, वहीं अब द्वित्व में भी केवल एक व्यंजन में स्वर बढ़ गया और दूसरा लुप्त होने लगा। जैसे- पृष्ठ-पिट्ठ-पीठ, पर्ण-पण-पान।
- अपभ्रंश में ड़ और ढ़ व्यंजन नहीं थे, पर आरंभिक हिन्दी में इनका विकास हुआ।
- अपभ्रंश का नपुंसक लिंग समाप्त हो गया और आरंभिक हिन्दी में दो ही लिंग रह गए।
- अपभ्रंश काफी हद तक योगात्मक भाषा थी, जबकि आरंभिक हिन्दी नियोगात्मक भाषा बन रही थी।
- आरंभिक हिन्दी में शब्द क्रम - कर्ता-कर्म-क्रिया निश्चित होने लगा था।
- न्ह, म्ह, ल्ह पहले संयुक्त व्यंजन थे, वे अब पुरानी हिन्दी में न, म, ल के महाप्राण रूप हो गए।
- आरंभिक हिन्दी में प्राय: ध्वनियां वही हैं, जो अपभ्रंश तथा अवहट्ट में मिलती हैं। इसके साथ ही आरंभिक हिन्दी में संयुक्त स्वर ऐ, औ, आई, इया आदि का प्रचलन बढ़ा।
- कुछ स्वरों का ह्रस्वीकरण हो गया तो कुछ स्वरों का दीर्घीकरण हो गया, जैसे- दीपावली > दिवारी (ह्रस्वीकरण); मनुष्य > मानुख (दीर्घीकरण)।
- संज्ञा के अनुसार विशेषणों के लिंग वचन इत्यादि परिवर्तित होने लगे। उदाहरण- पीतवसन > पीरोवसन।

निष्कर्ष

अत: आरंभिक हिन्दी की विशेषताओं के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि आरंभिक हिन्दी वास्तविक रूप से हिन्दी की आरंभिक प्रवृत्तियों को धारण करने वाली भाषिक स्थिति है। सरलीकरण और वियोगीकरण की जो प्रक्रिया पाली, प्राकृत, अपभ्रंश तथा अवहट्ट में विकसित हुई, वह आरंभिक हिन्दी में आकर सीधे-सीधे आधुनिक आर्यभाषा के रूप में प्रकट हुई।

प्र. अपभ्रंश की व्याकरणिक विशेषताएं बताइए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2023)

उत्तर: अपभ्रंश प्राकृतकालीन जन भाषाओं या लोक भाषाओं का एक विकसित रूप है। 500 ईस्वी से 1200 ईस्वी के बीच उत्तरी भारत की साहित्यिक रचनाओं में इसके प्रमाण मिलते हैं। भारत में भाषा का विकास संस्कृत, प्राकृत और फिर अपभ्रंश भाषा के रूप में हुआ है।

अपभ्रंश भाषा की व्याकरणिक विशेषताएं निम्नलिखित हैं:-

(1) स्वर:

ह्रस्व स्वर- अ, इ, उ, ए, ओ।
दीर्घ स्वर- आ, ई, ऊ, ए, ओ (ऐ व औ का पाली में लोप)।

(2) 'ऋ' का प्रयोग नहीं मिलता है; 'रि' का प्रयोग चलता रहा। रूपांतरण अ, इ, उ, ए। जैसे:- कृष्ण - कण्ह, मृत्यु - मितु, ऋण - रिण।

(3) **उकार बहुलता:** भाषा में उकार की बहुलता मिलती है; जैसे: मन - मनु, चल - चलु, अंग - अंगु।

(4) **अनुनासिकता:** अनुनासिकता के संबंध में तीन तरह की प्रवृत्तियां हैं:
   i. कहीं-कहीं स्वरों के अनुनासिक रूप विकसित हुए हैं। जैसे: चलहि - चलहिं, पक्षी - पंखि।
   ii. कुछ अनुनासिक शब्द अनुनासिकता रहित हैं। जैसे:- सिंह - सीह, विंशति - वीस।
   iii. अकारण अनुनासिक शब्द। जैसे: अश्रु - अंसु, वक्र - वंक।

(5) **स्वर भक्ति:** प्रदेश - परदेश, क्रिया - किरिया।

(6) **स्वर लोप:** अरण्य - रण (आदि स्वर लोप), लज्जा - लाज (अन्त्य स्वर लोप)।

(7) **व्यंजनमाला:** व्यंजनमाला में ङ, ञ, न, श, ष का अभाव; 'ट' वर्ग की प्रधानता।

(8) **अंत्य व्यंजन लुप्त भाषा:** जगत - जग, महान - महा।

(9) **संयुक्त व्यंजन समाप्त:** य, र, ल, व समाप्त। जैसे: चक्र - चक्क, धर्म - धम्म, कर्म - कम्म।

(10) तत्सम, तद्भव, देशज-विदेशज सभी प्रकार के शब्द मिलते हैं; तद्भव की संख्या सर्वाधिक है। साथ ही तुर्कों के आगमन से विदेशी शब्दों के प्रयोग होने लगे।

(11) **दो ही वचन:** अपभ्रंश में दो ही वचन होते हैं - एकवचन और बहुवचन। द्विवचन के सारे शब्द बहुवचन में शामिल हो गए।

निष्कर्ष

- यह भाषा अपनी पृथक भाषायी पहचान के साथ-साथ समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक अनुभवों को व्यक्त करती है।

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
हिन्दी साहित्य
(प्रथम प्रश्न-पत्र)

खण्ड `ख' (हिन्दी साहित्य का इतिहास)

हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की परंपरा

प्र. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल-पूर्व हिन्दी साहित्य इतिहास का लेखन। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2023)

उत्तर: हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा का वास्तविक आरम्भ 19वीं शताब्दी से माना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य का प्रथम व्यवस्थित इतिहास लिखकर एक नये युग का समारंभ किया।

- रामचंद्र शुक्ल से पूर्व जिन्होंने हिन्दी साहित्य लेखन का प्रयास किया, उनमें फ्रेंच विद्वान 'गार्सा-द-तासी' का नाम अग्रणी है, उन्होंने हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की शुरुआत की।
- इनके द्वारा 'इस्त्वार द ला लितरेत्युर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी' नामक ग्रन्थ की रचना की गई, जिसका प्रकाशन दो भागों में किया गया। इनमें प्रथम भाग का प्रकाशन सन् 1839 ई. में और द्वितीय भाग का प्रकाशन सन् 1847 ई. में हुआ।
- आरंभिक काल में मात्र कवियों के सूची संग्रह को इतिहास रूप में प्रस्तुत कर दिया गया। भक्तमाल आदि ग्रन्थों में यदि भक्त कवियों का विवरण दिया भी गया तो धार्मिक दृष्टिकोण तथा श्रद्धातिरेक की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त उसकी और कुछ उपलब्धि नहीं रही।
- 19वीं सदी में ही हिन्दी भाषा और साहित्य दोनों के विकास की रूपरेखा स्पष्ट करने के प्रयास होने लगे।
- प्रारंभ में निबंधों में भाषा और साहित्य का मूल्यांकन किया गया, जिसे एक अर्थ में साहित्य के इतिहास की प्रस्तुति के रूप में भी स्वीकार किया गया। डॉ. रूपचंद पारीक, गार्सा-द-तासी के ग्रंथ 'इस्त्वार द ला लितरेत्युर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी' को हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास मानते हैं।
- पाश्चात्य और प्राच्य विद्वानों ने हिन्दी के इतिहास लेखन के आरंभिक काल में प्रशंसनीय भूमिका निभाई है। शिवसिंह सरोज साहित्य इतिहास लेखन के अनन्य सूत्र हैं। हिन्दी के वे पहले विद्वान हैं, जिन्होंने हिन्दी साहित्य की परंपरा के सातत्य पर समदृष्टि डाली। अनन्तर, मिश्र बंधुओं ने साहित्यिक इतिहास तथा राजनीतिक परिस्थितियों के पारस्परिक संबंधों का दर्शन कराया।

निष्कर्ष

यद्यपि प्राच्य विद्वानों ने हिन्दी के इतिहास लेखन का प्रयास तो किया, लेकिन आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य का प्रथम व्यवस्थित इतिहास लिखकर एक नये युग का समारंभ किया। उन्होंने लोकमंगल व लोक-धर्म की कसौटी पर कवियों और कवि-कर्म की परख की और लोक चेतना की दृष्टि से उनके साहित्यिक अवदान की समीक्षा की।

प्र. कबीर की काव्य-भाषा (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2022)

उत्तर: कबीर भले ही पढ़े-लिखे नहीं थे, परंतु घुमक्कर स्वभाव का होने के कारण उनकी भाषा में ब्रज, अवधी, राजस्थानी, पूर्वी हिंदी, पंजाबी आदि का सम्मिश्रण मिलता है, जिससे उसे पंचमेल खिचड़ी या साधुक्कड़ी कहा जाता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उन्हें 'वाणी का डिक्टेटर' कहा है।

- भाषा की भाँति शैली भी अनिश्चित एवं विविध रूपात्मक है। उनका समस्त काव्य मुक्तक है और गेय शैली में हैं। भाव के अनुसार उनकी शैली भी बदलती जाती है।

1. **खण्डनात्मक शैली:** कबीर ने धर्म के नाम पर प्रचलित रूढ़ियों एवं परम्पराओं का डटकर विरोध किया है। ऐसे स्थलों पर उनके कथन में बुद्धिवाद एवं अक्खड़पन का प्राधान्य रहता है। ये कथन मर्म पर सीधी और करारी चोट करते हैं, तीखा व्यंग्य इनके शैली की प्रमुख गुण है। ऐसे अवसरों पर प्रयुक्त शैली को खण्डनात्मक शैली कहा जाता है।
2. **अनुभूतिव्यंजक शैली:** यह शैली कबीर के साहित्यिक स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है। पदों में गीतिकाव्य के समस्त लक्षण- मार्मिकता, अनुभूति की गहराई, संक्षिप्तता, संगीतात्मकता आदि दिखाई देते हैं। पदों की भाषा अपेक्षकृत प्रकट और सुघट है।
3. **अलंकार-विधान:** कबीर ने रूपक, अन्योक्ति, समासोक्ति, रूपकातिशयोक्ति उपमा, विभावना आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। ये अलंकार उनकी कविता में अत्यन्त स्वभाविक रूप से प्रस्फुटित हुए हैं तथा बिम्ब-विधायक हैं। रूपक का यह विधान अति विशिष्ट है।

सुरति ढीकली लेज ल्यौं, मन नित ढोलनहार ।
कंवल कुंवा में प्रेम रस, पीवै बारम्बार ॥

- कबीर के रूपकों की स्थिति यह है कि उन्होंने हठयोगियों के साधनात्मक रहस्यवाद के कुछ सांकेतिक शब्दों (चंद, सूर, नाद, बिन्दु, अमृत, औंधा कुआं आदि) को लेकर अलंकार का अद्‌भुत नमूना पेश किया है, जो सामान्य जनता के मानस पटल पर अपनी छाप छोड़ने में सफल रहा है।
- कबीर ने 'नलिनी' और 'सुवटा' को लक्ष्य करके अप्रस्तुत के माध्यम से प्रस्तुत की व्यंजना द्वारा सुन्दर अन्योक्ति लिखी हैं। उन्होंने जायसी की भाँति अनेक स्थानों पर समासोक्ति के द्वारा गूढ़ आध्यात्मिक व्यंजना की है-

जा कारण मैं ढूंढ़ता, सनमुख मिलिया आय ।
धनि काली पिव ऊजला, लागि न सकौं पाय ॥

- **छन्द योजना:** कबीरदास ने अपने समय में प्रचलित अनेक छंदों का प्रयोग प्राय: सभी पदों में किया है। कबीर की छंद-योजना के सम्बन्ध में डॉ. गोविन्द निगुणायत का यह कथन दृष्टव्य है- "कबीर ने अधिकतर सधुक्कड़ी छंदों का प्रयोग किया है। उनमें सबसे प्रमुख साखी, सबद और रमैनी है। इन छन्दों के अतिरिक्त चौंतीस, कहरा, हिंडोला आदि और भी अनेक छन्दों का प्रयोग हुआ हैं।

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
हिन्दी साहित्य
(द्वितीय प्रश्न-पत्र)

खण्ड 'क' (पद्य साहित्य)

कबीर

प्र. सप्रसंग व्याख्या-

जग हठवाड़ा स्वाद ठग, माया बेसाँ लाई ।
रामचरन नीका गही, जिनि जाइ जनम ठगाइ॥

कबीर माया मोहनी, जैसी मीठी खाँड़।
सतगुरु कृपा भई, नहीं तो करती भाँड़॥

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2023)

उत्तर:

सन्दर्भ: प्रस्तुत दोहा कबीर ग्रंथावली से लिया गया है। इसमें कहा गया है कि इस संसार में जीव विषय-वासना और माया के द्वारा ठग लिया जाता है।

व्याख्या: यह संसार एक बड़ा बाजार है, जिसमें इंद्रियों के स्वाद रूपी ठग हैं और माया रूपी वेश्या भी जीव को ठगने का प्रयास करती है। ऐसी अवस्था में हे जीव! यदि तू दृढ़तापूर्वक ईश्वर के चरणों का सहारा लेगा, तब तो ठीक है, नहीं तो इस बाजार रूपी संसार से विषय-वासना और माया के द्वारा बिना ठगे नहीं बच सकेगा।

- कबीर कहते हैं कि माया में बड़ा आकर्षण है; वह बरबस सबका मन मोह लेती है और वह बड़ी मीठी (अच्छी) लगती है; मुझ पर भी यह मोहिनी डाल देती, पर डाल न सकी। सौभाग्य से सद्गुरु मिल गए और उनकी कृपा हो गयी, इसलिए माया के इस मोहिनी रूप से बच गया, नहीं तो यह मुझे भांड़ बना देती।
- इस दोहे से यह शिक्षा मिलती है कि बिना सद्गुरु के जीव माया के बंधनों से छुटकारा नहीं प्राप्त कर सकता और सद्गुरु की कृपा प्राप्त करने पर ही इन बंधनों से छुटकारा मिल सकता है।

विशेष

- इसमें रूपक अलंकार का प्रयोग किया गया है।
- सद्गुरु के आशीर्वाद के महत्व को बताया गया है।

प्र. सप्रसंग व्याख्या-

पीछै लगा जाइ था, लोक वेद के साथि।
आगै थैं सतगुर मिल्या, दीपक दीया हाथि॥
दीपक दीया तेल भरि, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहुणां, बहुरि न आंवौं हट्ट॥

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2022)

प्रसंग:

- प्रस्तुत दोहे में कबीर, गुरु को ज्ञान प्रदाता स्वीकार करते हुए उनकी कृपा से सही मार्ग प्राप्त होने की बात स्वीकार करते हैं। गुरु कृपा से ही वह संसार-सागर में डूबने से बचे हैं।

व्याख्या:

- कबीर कहते हैं कि वह भी सामान्य लोगों की तरह, सांसारिक और वैदिक परम्पराओं का आंख बंद करके अनुसरण कर रहे थे। परन्तु आगे चलने पर उन्हें सद्गुरु मिले। उन्होंने कृपा करके उनके हाथ में ज्ञानरूपी दीपक पकड़ा दिया।
- ज्ञानदीप के प्रकाश में ही वह जान पाए कि वह तो अज्ञान के मार्ग पर जा रहे थे। इस प्रकार गुरुकृपा से ही वह ईश्वर भक्ति के सीधे-सादे मार्ग का दर्शन पा सके।
- कबीर कहते हैं कि वह भी अज्ञानी जनों की भांति अहंकार रूपी बेड़े पर सवार होकर संसार-सागर से पार होने की चेष्टा कर रहे थे। अहंकार का जर्जर बेड़ा उन्हें भवसागर-माया-मोह आदि में डुबोने ही वाला था, परन्तु गुरुकृपा रूपी लहर ने टक्कर देकर उन्हें चौंका दिया, सचेत कर दिया।
- गुरु कृपा के प्रकाश में ही उनको ज्ञात हुआ कि वह अन्धकार का बेड़ा तो नितान्त जर्जर स्थिति में था और वह डूबने ही वाले थे।
- अत: वह तुरन्त उस पर से उतर पड़े। उन्होंने अहंकार का परित्याग करके गुरु द्वारा प्रदर्शित मोक्ष मार्ग को अपना लिया।

विशेष:

- भाषा में विभिन्न भाषाओं के शब्दों को मुक्त भाव से प्रयोग हुआ है।
- शैली उपदेशात्मक है।
- यह बताया गया है कि गुरु के बिना ज्ञान तथा संसार से मुक्ति मिलना सम्भव नहीं है।
- लोकाचार और वैदिक कर्मकाण्ड से ऊपर उठकर, परमात्मा की सहज भक्ति करने से ही मनुष्य का उद्धार हो सकता है।
- दीपक और दीया हाथ में लक्षणा शक्ति का सौन्दर्य है।

प्र. कबीर-वाणी वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कितनी प्रासंगिक है? उदाहरण सहित लिखिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2022)

उत्तर: कबीर युग दृष्टा कवि थे। उनका व्यक्तित्व, उनकी वाणी युगीन परिस्थितियों की देन है। कबीर ने अपने वर्तमान को ही नहीं भोगा बल्कि भविष्य की चिरंतर समस्याओं को भी पहचाना।

- तत्कालीन विकृतियों और विसंगतियों के खिलाफ लड़ने की अथक दृढ़ता एवं सत्य की साधना का अदम्य साहस उन्हें जीवनानुभवों से मिला।
- उन्होंने जिन सामाजिक, सांस्कृतिक विषमताओं के खिलाफ आजीवन संघर्ष किया, वे आज भी यथावत हैं।
- कबीरदास का वैचारिक आंदोलन आज भी वर्ग-विहीन समाज के निर्माण, मानवता की बहाली, प्रेम, हिन्दू-मुस्लिम सौहार्द, आडंबरहीन भक्ति तथा नैतिकता के निर्माण के लिए नितांत प्रासंगिक है।

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
हिन्दी साहित्य
(द्वितीय प्रश्न-पत्र)

खण्ड 'ख' (गद्य साहित्य)

भारतेन्दु

प्र. 'भारत दुर्दशा' एक प्रतीकात्मक नाटक है। विश्लेषण कीजिए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2023)

उत्तर: भारत दुर्दशा, भाव प्रतीकों का नाटक है। ये भाव प्रतीकात्मक स्तर पर भारत के लोगों की बुराइयों को सामने लाते हैं। ऊपर से देखने से लगता है कि ये पात्र वर्ग या समुदाय का प्रतिनिधित्व नहीं करते, लेकिन यदि आलस्य रंगमंच पर आता है तो आलसी भारतीयों के समुदाय का बोध होता है। इसी तरह दरिद्रता भारतीय दरिद्र जनता का प्रतिनिधित्व करती है, जिसकी आबादी सबसे अधिक है।

- इस नाटक के पाँचवें अंक में भारत, भारत दुर्देव, मदिरा, लोभ, आलस्य जैसे भाव प्रतीकों की जगह स्पष्ट मानवीय आकार में पात्र उभरते हैं- बंगाली, महाराष्ट्री, एडीटर, कवि, सभापति और दो देशी सजीव पात्र। इन पात्रों के कारण किताबखाने का दृश्य अधिक जीवन्त हो गया है। भारतेन्दु ने अपनी राजनैतिक सूझ-बूझ और कलात्मकता से इस दृश्य को अधिक व्यंजक बनाया है।
- भारत इस नाटक के दूसरे अंक में आता है। वह फटेहाल है, कुत्तों, सियारों के चहल पहल के बीच फटेहाल भारत का प्रवेश अपहर्ताओं के बीच अपने सत्व के लिए संघर्ष करती हुई जनता को प्रतीकित करता है। भारत दुर्देव विदेशी आक्रमणकारी सत्ता का प्रतीक है। यह आधा मुसलमानी और आधा क्रिस्तानी वेशभूषा में है। भारतेन्दु ने इसकी वेशभूषा के लिए अपनायी गयी नाट्य युक्ति द्वारा हजार वर्षों की भारतीय गुलामी को प्रत्यक्ष कर दिया है।
- भारत भाग्य भारतीय जनता के भाग्यवाद का प्रतीक है। इस भाग्यवाद से ही पीछा छुड़ाकर ही भारत अपनी सही अस्मिता की प्राप्ति कर सकता है।
- भारतेन्दु जी भारत दुर्दशा में भारतीय जनता की निर्भरता को निशाना बनाते हैं। जनता अपनी मुक्ति के लिए स्वयं प्रयास नहीं करती, अपने पुरुषार्थ पर उसे भरोसा नहीं रहा।
- भारत भी बचाव के लिए कभी ईश्वर का सहारा ढूंढ़ता है और कभी राज राजेश्वरी विक्टोरिया का। वह ईश्वर से शरणागति की प्रार्थना करता हुआ कहता है-

सब विधि दुख सागर मैं डूबत धाई उबारौ नाथ।

निष्कर्ष

नाटक का प्रमुख उद्देश्य है, तत्कालीन भारत की दुर्दशा को दिखाना एवं दुर्दशा के कारणों को कम कर दुर्दशा करने वालों का यथार्थ चित्र उपस्थित करना। व्यंग्य इस नाटक का प्रधान गुण है।

प्र. 'भारत दुर्दशा' नाटक अंग्रेजी राज्य की अप्रत्यक्ष रूप से कटु और सच्ची आलोचना है। विश्लेषण कीजिए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2022)

उत्तर: भारत दुर्दशा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सन 1880 ई में रचित एक हिन्दी नाटक है। इसमें भारतेन्दु ने प्रतीकों के माध्यम से भारत की तत्कालीन स्थिति का चित्रण किया है। वे भारतवासियों से भारत की दुर्दशा पर रोने और फिर इस दुर्दशा का अन्त करने का प्रयास करने का आह्वान करते हैं।

भारतेन्दु का यह नाटक अपनी युगीन समस्याओं को उजागर करता है, उसका समाधान करता है।

- भारत दुर्दशा में भारतेन्दु ने अपने सामने प्रत्यक्ष दिखाई देने वाली वर्तमान लक्ष्यहीन पतन की ओर उन्मुख भारत का वर्णन किया है।
- भारत दुर्दशा में अंग्रेजी राज की जितनी तीखी आलोचना है, उतनी ही तीखी भारतीय जनता की आत्म आलोचना भी है।
- इसमें एक ओर अंग्रेजी शासन और शोषण की बहुआयामी तस्वीरें हैं तो दूसरी ओर भारतीय जनता की काहिली, अंधविश्वास, भग्यवाद और जातिवाद के चित्र भी है। इन चित्रों में ही भारतीय जनता की गुलामी के बीज छिपे हैं। इसके व्यंग में बहुत पैनापन है वह मर्म को सीधे स्पर्श करता है।
- भारतेन्दु ब्रिटिश राज और आपसी कलह को भारत की दुर्दशा का मुख्य कारण मानते हैं। तत्पश्चात वे कुरीतियां, रोग, आलस्य, मदिरा, अंधकार, धर्म, संतोष, अपव्यय, फैशन, सिफारिश, लोभ, भय, स्वार्थपरता, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अकाल, बाढ़ आदि को भी भारत दुर्दशा का कारण मानते हैं। लेकिन सबसे बड़ा कारण अंग्रेजों की भारत को लूटने की नीति को मानते हैं।
- अंग्रेजों ने अपना शासन मजबूत करने के लिये देश में शिक्षा व्यवस्था, कानून व्यवस्था, डाक सेवा, रेल सेवा, प्रिंटिंग प्रेस जैसी सुविधाओं का सृजन किया। पर यह सब कुछ अपने लिये, अपने शासन कार्य को आसान बनाने के लिये था।

ऐसे समय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का भारत दुर्दशा नाटक प्रकाशित हुआ। उन्होंने लिखा-

रोअहु सब मिलिकै आवहु भारत भाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई॥

भारतेंदु के लिए यह तो आसान नहीं था कि वे अंग्रेजी राज्य व्यवस्था की खुलकर आलोचना करते। लेकिन अंधेर नगरी में उन्होंने विभिन्न अवसरों पर कभी स्पष्ट रूप से और कभी सांकेतिक रूप में अपनी बात कही है।

- नाटक के दूसरे दृश्य में जहां बाजार का दृश्य प्रस्तुत किया गया है, वहां विभिन्न सामग्री बेचने वाले लोग ग्राहकों को आकृष्ट करने के लिए जो बात कहते हैं उनमें उन्होंने अपने समय का खाका भी प्रस्तुत किया है और उसकी आलोचना भी।